शिक्षण माध्यम

(सन् 1962 में आयोजित कुलपतियों के सम्मेलन में "विश्वविद्यालयीन शिक्षा के कतिपय आयाम" विषय पर दिए गए भाषण के सम्पादित अंश)

विश्वविद्यालय स्तर पर, शिक्षण माध्यम की समस्या पर संक्षिप्त विमर्श यहां अनुचित या अप्रासंगिक नहीं होगा। इस प्रकार के विषय पर विचार-विमर्श करते समय कोई व्यक्ति अपने विचारों पर सर्व सहमति की आशा नहीं रख सकता। यह जानकर प्रसन्नता होती है कि शिक्षा, व्यापक रूप से ऐसा कर्म है जहां विवाद की संभावना निर्विवाद है। जहां कहीं भी सहमति बनती है ज्ञान का वहां ह्रास अवश्यम्भावी है। जहां भी शिक्षा का उन्नयन हुआ है वह विरोध, असहमति और अस्वीकृति का ही प्रतिफलन है। इस स्थिति में भाषा की समस्या हमारे लिए अधिक गतिशील एवं सृजनात्मक आयामों की रचना कर देती है। भाषा की समस्या का अनुशीलन, हमारे विचारों में निर्भयता, स्वतंत्रता एवं वस्तुनिष्ठता का बीजारोपण करने के साथ-साथ इस सम्मेलन की उपादेयता सुनिश्चित करेगा। इस सम्मेलन की प्रथम शर्त है- शांतचित्त एवं तटस्थ विचार विनिमय, जो हमारे मस्तिष्क को सरलतापूर्वक नए विचारों का आग्रही ग्राहक बना सकता है।

ऐसा आभास होता है कि निकट भविष्य में सभी विश्वविद्यालय एकल भाषा की अपेक्षा द्विभाषी शिक्षण-नीति का परिपालन करेंगे जिसमें अंग्रेजी भाषा के साथ-साथ एक क्षेत्रीय भाषा का अनुपालन किया जाएगा जैसी कि सिफारिश सन् 1962, में राष्ट्रीय एकता परिषद ने की थी। स्नातकोत्तर शिक्षा अनुसंधान के साथ-साथ विश्वविद्यालयों के मध्य अंतर संवाद हेतु, अंग्रेजी भाषा एक स्वाभाविक विकल्प बनी रहेगी। अंग्रेजी भाषा हमारे अंतरराष्ट्रीय संपर्कों के लिए भी आवश्यक संपर्क सूत्र का कार्य करेगी। आज के समय में अग्रेजी भाषा हमारे लिए स्वाभाविक विकल्प है। दूसरी ओर कठिन विषयों की मूल अवधारणाओं को समझने के लिए तथा विज्ञान एवं उद्योगों के विकास के लिए, विज्ञान चिंतकों एवं विज्ञान कर्मियों को एक मंच पर लाने के लिए देश में क्षेत्रीय भाषाओं का उपयोग करना आवश्यक हो गया है। संचार-संपर्क स्थापित करने के लिए, स्कूलों के स्तर पर हिंदी भाषा का शिक्षण पूरे देश में अनिवार्य है। राष्ट्रीय एकता परिषद ने जून 1962 में यह विचार व्यक्त किया हैः

"परिषद की राय में, शिक्षण माध्यम में परिवर्तन का औचित्य केवल सांस्कृतिक एवं राजनीतिक भावनाओं के कारण सिद्ध नहीं होता वरन, शैक्षिक आवश्यकताओं, विषयवस्तु की समझ एवं बोधगम्यता के कारण भी यह उचित है। इसके अलावा, भारतीय विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक सामान्यतः अद्यतन ज्ञान के क्षेत्र में और विशेष रूप से विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के संदर्भ में तब तक महत्वपूर्ण अवदान नहीं दे पाएंगे जब तक कि क्षेत्रीय भाषाओं के माध्यम से उस क्षेत्र के जन-सामान्य, कामगारों, कलाकारों तथा शिल्पकारों को उनके साथ नहीं जोड़ा जाता। परिषद का मत है कि देश में कौशल विकास तब तक बाधित होता रहेगा जब तक कि विश्वविद्यालयीन स्तर पर क्षेत्रीय भाषाओं को शिक्षण माध्यम के रूप में नहीं अपनाया जाता।"

यह महत्वपूर्ण है कि क्षेत्रीय भाषाओं को शिक्षण-माध्यम के रूप में अपनाने का तात्पर्य, अंग्रेजी भाषा को विश्वविद्यालयों के परिसरों से बाहर रखना नहीं है। वास्तविक रूप में प्रथम उपाधि पाठ्यक्रम को

सफलतापूर्वक संपन्न करने वाले स्नातकों के पास स्वयं को सहजता से अंग्रेजी भाषा में अभिव्यक्त करने की क्षमता तथा अंग्रेजी भाषा के साहित्य के साथ-साथ विज्ञान एवं तकनीकी विषयों का ज्ञान भी आवश्यक है। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए प्रारंभिक स्कूली शिक्षा के स्तर पर ही अंग्रेजी भाषा-ज्ञान का समुचित अभ्यास कराना चाहिए। रूसी भाषा का अध्ययन भी वर्तमान में उपलब्ध सुविधाओं से अधिक विस्तृत होना चाहिए।

जैसा कि विभिन्न अवसरों पर स्पष्ट किया जा चुका है कि वर्तमान में यह व्यवस्था जिसमें प्रथम उपाधि स्तर पर छात्रों की विशाल संख्या को उपाधियों की परीक्षा क्षेत्रीय भाषाओं में देने की सुविधा है जबकि कक्षाओं में शिक्षण माध्यम अंग्रेजी भाषा ही है। यह व्यवस्था शैक्षिक रूप से असंतोषजनक एव अवांछित है। एक छात्र के लिए स्कूल से विश्वविद्यालय में प्रवेश के समय शिक्षण माध्यम के रूप में हुए परिवर्तन को स्वीकार करना कठिन है। एक छात्र के जीवन में स्कूल से विश्वविद्यालय में प्रवेश के समय की स्थिति अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। विद्यालयों के स्तर पर किसी भी छात्र के लिए, स्कूल-स्तर की अपेक्षा किसी विषय को समझने या किसी पक्ष पर ध्यान एकाग्र करने के लिए अधिक क्षमता की आवश्यकता होती है।

स्कूल से विश्वविद्यालयों में प्रवेश के समय छात्रों के मन में जो द्विविधा की स्थिति रहती है वह शिक्षण माध्यम में हुए भाषायी परिवर्तन के कारण और बढ़ जाती है क्योंकि स्कूल के स्तर पर वह भिन्न भाषायी-व्यवहार का आदी था। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि छात्र इस स्थिति में अपना संतुलन खो दे और अध्ययन के मार्ग से ही भटक जाए। पाठ्य विषय की जटिलता तथा शिक्षण माध्यम की बदली हुई भाषा दोनों कारण मिलकर छात्रों के लिए कठिनाई उत्पन्न कर सकते हैं। स्नातक स्तर के पाठ्यक्रमों का यदि शिक्षण माध्यम क्षेत्रीय भाषाओं में है तो यह व्यवस्था सुविधाजनक हो सकती है। लेकिन उच्च शिक्षा के अगले पायदानों के लिए अंग्रेजी भाषा को शिक्षण माध्यम के रूप में अपना लेना अधिक श्रेयस्कर है।

शिक्षण माध्यम की जो भी भाषा हो, शैक्षिक गतिशीलता तथा अन्य कारणों से यह महत्वपूर्ण है कि विश्वविद्यलय के स्तर पर यहां तक कि स्नातक स्तर पर भी व्याख्याता अंग्रेजी भाषा में व्याख्यान देने का अधिकारी हो। मैं सोचता हूं और मैं इसकी पुनरावृत्ति भी नहीं करना चाहता कि यह अनिश्चित है कि आगामी कुछ दशकों में क्या स्थिति रहने वाली है या बदलने वाली है। एक प्राध्यापकों को और अधिक परिश्रम करने की आनिवार्यता रहेगी अगर वह छात्रों की क्षेत्रीय भाषाओं में ही पाठ्यविषय को अधिक सहज, सरल या ग्राह्य बनाना चाहता है। मुख्य बिंदु यह है कि छात्रों को उन्हीं की भाषा में पाठ्यविषय को अधिक सुगमता या सृजनशीलता के साथ समझा देने में अधिक सफलता प्राप्त होती है।

शिक्षण माध्यम के संबंध में विश्वविद्यालयों की जो भी नीतियां या सिद्धांत रहे हों लेकिन महत्वपूर्ण तथ्य है कि क्षेत्रीय भाषाओं में उपयुक्त ग्रंथ, पाठ्य सामग्री आदि का प्रकाशन क्षेत्रीय भाषाओं में करना चाहिए, विशेष रूप से विज्ञान एवं तकनीकी क्षेत्रों में। यह तथ्य अन्य अनेक कारणों से भी महत्वपूर्ण है। ऐसा करने से जन सामान्य तथा प्रबुद्ध वर्ग के मध्य दूरी कम हो सकेगी। औद्योगीकरण की दिशा में भी इस कदम से सहायता मिलेगी। देश में विज्ञान तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास में भी इस कदम से सहायता मिलेगी।

राष्ट्रीय एकता समिति का यह विचार है कि विश्वविद्यालयीन स्तर पर शिक्षण माध्यम के संबंध में निर्णय लेने का अधिकार संबंधित विश्वविद्यालय को ही है। अनेक कारणों तथा परिस्थितियों के संदर्भ में किसी कठोर निर्णय पर पहुँचना उचित नहीं है तथा सभी विश्वविद्यालयों में अंग्रेजी से क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षण देने के लिए एक ही निर्णय को लागू नहीं किया जा सकता।

विश्वविद्यालयों के मध्य एक भाषायी अंतर संवाद की आवश्यकता को नकारा नहीं जा सकता। शिक्षण तथा अनुसंधान के क्षेत्र में विश्वविद्यालयों को आपसी सहयोग द्वारा समान कार्यक्रम संचालित करने चाहिए जहां समान आकांक्षाओं एवं उद्देश्यों की सम्प्राप्ति की जा सके। हमें अपनी उपलब्ध ऊर्जा एवं क्षमता द्वारा ऐसी ही समग्र बौद्धिकता का विकास देश के विश्वविद्यालयों में करना चाहिए। इस प्रक्रिया में किसी भी प्रकार के अवरोध को बाधक नहीं बनने देना चाहिए।

(राष्ट्रीय एकता परिषद् तथा संपूर्णानंद समिति की सिफारिशों के संपादित अंश)

भावनात्मक एकता के संदर्भ में संपूर्णानंद समिति ने कतिपय बिंदुओं पर प्रकाश डालते हुए कहा है;

राष्ट्रीय एकता एवं अखंडता के लिए शिक्षा क्षेत्र में प्रारंभिक स्तर से लेकर उच्च स्तर तक भारतीय भाषाओं के शिक्षण-माध्यम के रूप में अपना लेना एक गौरव का विषय है। इस संदर्भ में प्रबुद्ध वर्ग तथा जन सामान्य के मध्य उत्पन्न अंतराल को पाटना आवश्यक है। शताब्दियों से ही भारतीय प्रबुद्ध वर्ग ने कुछ समान भाषाओं में कार्य किया है-सर्वप्रथम संस्कृत में फिर फारसी में और बाद में अंग्रेजी भाषा में। इस प्रकार प्रबुद्ध वर्ग एवं जन सामान्य के मध्य खाई बनी रही। इस खाई को पाटने के लिए विश्वविद्यालय स्तर पर क्षेत्रीय भाषाओं को शिक्षण माध्यम बनाया जाना चाहिए। राष्ट्रीय अखंडता परिषद ने वर्ष 1962 में जो मत व्यक्त किया है उसे हम अनुमोदित करते हैं।

“भारतीय विश्वविद्यालयों में कार्यरत प्राध्यापक, आधुनिक ज्ञान विशेषतः विज्ञान एवं तकनीकी ज्ञान के क्षेत्र में बड़ा योगदान तब तक नहीं कर पाएंगे जब तक कि विश्वविद्यालय के प्रबुद्ध व्यक्ति तथा जनसामान्य, शिल्पकार एवं तकनीकी कामगारों के मध्य भारतीय भाषाओं में नियमित संवाद नहीं होगा। परिषद् के मत में देश में गुणवत्तापूर्ण कौशल विकास का कार्य तब तक अवरुद्ध रहेगा जब तक कि विश्वविद्यालयों में भारतीय भाषाओं को शिक्षण माध्यम के रूप में नहीं अपनाया जाता। अपनी सिफारिशों को संक्षेप में रखते हुए, परिषद् का कहना हैः

“शिक्षा के क्षेत्र में प्रारंभिक स्तर से उच्च स्तर तक शिक्षण माध्यम के रूप में, भारतीय भाषाओं के उपयोग से राष्ट्रीय अखंडता का विकास महत्वपूर्ण ढंग से किया जा सकता है क्योंकि विश्वविद्यालय स्तर पर प्रबुद्ध वर्ग तथा जनसामान्य के मध्य अंतराल को कम किया जा सकता है। इस संदर्भ में शिक्षा के स्तर में गिरावट को रोकने के लिए उपाय भी करने चाहिए।”

भारतीय भाषाओं में शिक्षण देने के लिए हमें पाठ्यपुस्तकों तथा पाठ्य सामग्री को अंग्रेजी भाषा से या अन्य विदेशी भाषाओं से अनूदित करना आवश्यक है। अंतरविश्वविद्यालयीन तथा अंतरराज्यीय समन्वय हेतु संपर्क भाषाओं जैसे हिंदी तथा अंग्रेजी आदि का अध्यापन आवश्यक है ताकि क्षेत्रीय भाषाओं में माध्यम परिवर्तन किया जा सके।

देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में आपसी संपर्क स्थापित करने की त्वरित आवश्यकता है ताकि भारतीय भाषाओं में शिक्षण माध्यम के अपनाने पर कोई अंतराल न बन सके अन्यथा विभिन्न राज्यों के

विश्वविद्यालयों में शिक्षा के स्तर में अंतर आ सकता है। विशुद्ध रूप से बौद्धिक उद्देश्यों के लिए, विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों को अंग्रेजी भाषा का यथेष्ट ज्ञान आवश्यक है ताकि वे सहजता से अपने आपको अभिव्यक्त कर सकें। इस दक्षता के लिए विद्यार्थियों को चाहिए कि वे अंग्रेजी भाषा के व्याख्यानों को बारंबार सुनें तथा अंग्रेजी भाषा के अभ्यास पाठों को लिखें। यह सुनिश्चित करने के लिए सभी विश्वविद्यालय एक दूसरे से शैक्षिक रूप से अलग-थलग न पड़ जाएं तथा उनका शैक्षिक स्तर भी उन्नतशील बना रहे और अध्येता छात्र अपने विषयों में ज्ञान की ऊँचाइयों को छू सके, सभी विश्वविद्यलयों में अंग्रेजी भाषा राजकीय भाषा की सहयोगी भाषा बनी रहेगी। इस प्रकार अंग्रेजी भाषा भी सहयोगी शिक्षण माध्यम के रूप में एक आवश्यक संशुद्धि है। यह व्यवस्था किसी विश्वविद्यालय के बड़े महाविद्यालय या महाविद्यालय के किसी विभाग में प्रयोग के लिए प्रारंभ की जी सकती है। इस व्यवस्था की रूपरेखा की विस्तृत जानकारी किसी विश्वविद्यालय द्वारा वहां की परिस्थितियों के अनुसार निर्धारित की जा सकती है।

राष्ट्रीय एकता परिषद की 1962 में प्रस्तुत की गई सिफारिशें यहाँ दी जा रही हैः-

“समिति की राय में शिक्षण माध्यम में परिवर्तन का औचित्य केवल सांस्कृतिक एवं राजनीतिक भावनाओं के कारण सिद्ध नहीं होता वरन् शैक्षिक आवश्यकताओं, विषयवस्तु की समझ एवं बोधगम्यता के कारण भी यह उचित है। इसके अलावा, भारतीय विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक सामान्यतः अद्यतन ज्ञान के क्षेत्र में और विशेष रूप से विज्ञान और प्रौद्योगिकी के संदर्भ में तब तक महत्पूर्ण अवदान नहीं दे पाएंगे जब तक क्षेत्रीय भाषाओं के माध्यम से उस क्षेत्र के जन-सामान्य कामगारों, कलाकारों तथा शिल्पकारों को उनके साथ नहीं जोड़ा जाता। समिति का मत है कि देश में कौशल विकास तब तक बाधित रहेगा जब तक कि विश्वविद्यालयी स्तर पर क्षेत्रीय भाषाओं को शिक्षण-माध्यम के रूप में नहीं अपनाया जाता। परिषद् का यह विचार है कि जब भी अंग्रेजी भाषा को माध्यम के रूप में विस्थापित किया जाना है तब विश्वविद्यालयों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि इस बदलाव के कारण शिक्षा के स्तर में विपरीत प्रभाव न पड़े। इस बदलाव के पहले प्राध्यापकों का पूरा सहयोग तथा आवश्यक पाठ्य-पुस्तकें एवं पाठ्य सामग्री की पर्याप्त आपूर्ति सुनिश्चित कर लें। इस संबंध में संबंधित अधिकारियों द्वारा पर्याप्त प्रोत्साहन देना चाहिए।

परिषद् इस तथ्य पर बल देना चाहती है कि अंग्रेजी भाषा को एक अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाए जाने का बहुत महत्व है। क्षेत्रीय भाषाओं को शिक्षण माध्यम के रूप में अपनाए जाने पर या अंग्रेजी भाषा के पूर्ण रूप से विस्थापन के समय भी अंग्रेजी भाषा विभिन्न विश्वविद्यालयों तथा राज्यों के मध्य सम्पर्क भाषा बनी रहेगी। अतः हमें संपर्क भाषाओं-हिंदी तथा अंग्रेजी की शिक्षा पर अधिक ध्यान देना चाहिए ताकि क्षेत्रीय भाषाओं के शिक्षण माध्यम बनने पर किसी प्रकार का व्यवधान उत्पन्न न हो।

अंतर्राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अंग्रेजी भाषा विभिन्न विश्वविद्यालयों के मध्य एक संपर्क भाषा का कार्य करेगी तथा विश्वविद्यालयों में कार्यरत छात्रों एवं प्राध्यापकों के मध्य आपसी आवास-प्रवास की भी व्यवस्था हो सकेगी। इसके अतिरिक्त अंतरराष्ट्रीय स्तर की भाषा होने के कारण अंग्रेजी भाषा समूचे विश्व के लिए संपर्क भाषा का कार्य करेगी। यह भाषा क्षेत्रीय भाषाओं के विकास तथा विस्तृत अध्ययन के लिए भी उपयुक्त है।

परिषद् को आशा है कि जब अंग्रेजी भाषा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर एक संपर्क भाषा के रूप में स्थापित है उसी प्रकार हिंदी भाषा विकसित होकर आंतरिक संपर्क भाषा का रूप ले लेगी। परिषद् इसलिए, यह सुझाव देती है कि विश्वविद्यालय स्तर पर विद्यार्थी जब अंग्रेजी भाषा पर अधिकार रखते हुए हिंदी भाषा का श्रेष्ठ ज्ञान अर्जित कर लेंगे तब उन्हें इन भाषाओं में दिए गए व्याख्यानों को समझने में आसानी होगी। इन वक्तव्यों के संदर्भों में, परिषद् पुनः यह अभिमत व्यक्त करती है कि मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन में दी गई सिफारिश उचित है- कि हिंदी तथा अंग्रेजी भाषा में पढ़ाई के स्तर को उन्नत किया जाए ताकि स्कूल एवं विद्यालयों के स्तर पर इस स्तर को बनाए रखा जाए। शिक्षण माध्यम के संबंध में अंतिम निर्णय लेने का अधिकार विश्वविद्यालय को है। जिस प्रकार क्षेत्रीय भाषाओं को शिक्षण माध्यम के रूप में विकसित होने का प्राकृतिक अधिकार है उसी प्रकार अंग्रेजी या हिंदी भाषा को शिक्षण माध्यम के रूप में मान्यता देने पर कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। किसी महाविद्यालय या विश्वविद्यालय में शिक्षण माध्यम के रूप में किसी भी भाषा का चुनाव वहीं की परिस्थितियों के अनुसार किया जा सकता है। परिषद् यह अनुशंसा करती है कि प्रत्येक विश्वविद्यालय में परीक्षा देने के लिए क्षेत्रीय भाषा के साथ-साथ हिंदी या अंग्रेजी भाषा में परीक्षा का विकल्प देना चाहिए।